14. बिगड़ी को बनाने की अर्थात् व्यर्थ को समर्थ में बदलने की कला

कई बार किसी चीज़ को देखकर ऐसा लगता है कि वह बिल्कुल बेकार है; उसकी कुछ भी उपयोगिता नहीं है। उसे फेंक दिया जाता है। परन्तु आज तो कबाड़ख़ाने बने हुए हैं। जिसे हम व्यर्थ काग़ज़, टूटी बोतलें, बहते कनस्तर या फटे-पुराने कपड़े समझते हैं; उन्हें भी कबाड़ी ख़रीदता है। वो उसका फिर से नवीनीकरण करने के लिए अथवा कच्चे माल के तौर से उनका प्रयोग करने के लिए कारख़ाने वालों को बेच देता है। कबाड़ख़ाने के इस माल को लेन-देन करके वो मालदार बन जाता है। इसका अर्थ तो यही होता है कि **पूर्णतः व्यर्थ कोई भी चीज़ नहीं है। जिन चीज़ों का उपयोग करना हम नहीं जानते, उन्हें हम 'व्यर्थ' अथवा 'वेस्ट' (waste) कह देते हैं।** एक ज़माना था जब हम ऐसी बहुत-सी चीज़ों को फेंक देते थे परन्तु आज तो काग़ज़ के 'बेकार' टुकड़ों का, सिलाई के बाद बचे हुए कपड़े के चीथड़ों का, फटे-पुराने वस्त्रों का, लोहे की चीज़ें बनाने के बाद बचे-खुचे बे-मेल टुकड़ों (scrap) का, यहाँ तक कि माचिस की प्रयोग की हुई तीलियों का भी रूपान्तर करके उन्हें उपयोगी वस्तु बनाया जा सकता है।

एक समय ऐसा था कि कारख़ाने में जो चीज़ बनायी जाती थी, उसे बनाने के बाद जिस प्रकार की सामग्री बच जाती थी, उसे बेकार मान कर उससे छुटकारा पाने का यत्न किया जाता था। परन्तु आज तो उनका प्रयोग करने के तरीके भी निकल आये हैं और उन्हें भी उप-पदार्थ (By-products) मान कर उनका क्रय-विक्रय होता है और उन्हें प्रयोग में लाया जाता है।

ठीक इसी प्रकार, पुरुषार्थी जीवन में कई अवसर ऐसे आते हैं जब ऐसा महसूस होता है कि हानि (loss) हो गयी है। परन्तु उस **हानि को भी कई गुणा लाभ में परिवर्तित करने की विधि अथवा युक्ति भी अपने प्रकार की एक कला है।** मान लीजिये कि किसी को अपने व्यापार में कुछ आर्थिक हानि हो गयी और उसके कारण उसका धन्धा ठप्प हो गया अथवा उसकी कमाई ही रुक गयी। तब सम्भव है कि उससे उसकी ख़ुशी कम हो जाये, उमंग-उत्साह क्षीण हो जाये और ऐसा लगने लगे कि उसका भाग्य ऊँचा नहीं है। व्यापार के मन्द या बन्द होने के साथ उसका पुरुषार्थ भी ढीला पड़ सकता है। परन्तु जिसे हानि को लाभ में बदलने की कला आती होगी वो तो स्वयं भगवान में अटूट आस्था रखकर और ये सोचकर कि अब उसे विनाशी कमाई की बजाय अविनाशी कमाई करने का सुअवसर प्राप्त हुआ है, वो अधिक योगाभ्यास करके अनमोल आध्यात्मिक अनुभवों से मालामाल हो जायेगा। वो ये सोचेगा कि विनाशी धन तो वैसे भी अब निकट भविष्य में धूल-धूसरित होने वाला है,

इसलिए उसे अविनाशी कमाई करने की ज़रूरत है। ऐसा सोचने से उसकी ख़ुशी का ख़ज़ाना बढ़ेगा और दिनोंदिन उदास रहने की बजाय वो अपने उत्कर्ष के लिए प्रयत्न करेगा।

इसी तरह, मान लीजिये कि किसी के शरीर को कोई छोटा-मोटा रोग लग गया। अब इस बात की संभावना है कि उसको यह संकल्प आये कि वो स्वास्थ्य जैसी अनमोल चीज़ को गँवा बैठा है और अब किसी काम के योग्य नहीं रहा है और कि दवा इत्यादि पर उसकी पिछली कमाई का पैसा भी लग रहा है। परतु जो इस कला का जानकार होगा वो ऐसे व्यर्थ संकल्प न करके सबको समर्थ बनाने का संकल्प करेगा। वो यह सोचेगा कि अब उसे ऐसा अवसर मिला है जब वो अधिक समय परमात्मा की स्मृति में स्थित हो सकता है, ज्ञान की गहराई में गोता लगा सकता है और सेवा की रफ़्तार को बढ़ाने के लिए कुछ अधिक योजनायें बना सकता है और सोच-विचार कर सकता है। उससे जो लोग मिलने आयेंगे, उनको वो अपनी स्थिति और वाणी से 'आत्मिक स्वास्थ्य' (Spiritual Health) की ओर आगे बढ़ा सकता है।

ऐसे ही, मनुष्य की जब निन्दा होती है तो उसके मन में यह संकल्प चल सकता है कि वह व्यक्ति उसका विरोधी है और उसने उसके प्रति अपनी दुश्मनी का भाव प्रगट करने के लिए ही ऐसा किया है। परन्तु इसकी बजाय यदि वो ऐसा सोचे कि ''मैं स्वयं में ऐसा परिवर्तन लाऊँगा कि निन्दक भी प्रशंसक बन जाये और मैं स्वयं भी लोक-पसन्द तथा प्रभु-पसन्द बन जाऊँ'', तब वो इस कला का जानकार कहलायेगा।

वास्तव में यह कला ऐसी कला है जो व्यक्ति को कई विषम परिस्थितियों में ही नहीं बल्कि प्रतिदिन काम में आती है। प्रतिदिन ही मनुष्य के जीवन में ऐसे क्षण आते हैं जब उसे किसी न किसी प्रकार की क्षति होती दिखती है। यदि वो उन विषम परिस्थितियों को बदल कर जीवन में मोड़ ले आता है और इन परिस्थितियों को सुख का साधन बना लेता है तब वो इस पुरुषार्थी जीवन में बहुत आगे निकल जाता है। अतः सम्पूर्णता के लिए इस कला का अभ्यास बहुत ज़रूरी है।

परन्तु इसके लिए आवश्यकता इस बात की है कि व्यक्ति अपने इस दृष्टिकोण को बदल दे कि कोई चीज़ बिल्कुल ही बेकार होती है। इसकी बजाय वो यह सोच ले कि जैसे परमात्मा बिगड़ी को संवारने वाला है, वैसे ही उसका भी बिगड़ी को बनाने की कला का अभ्यास करना ज़रूरी है।

***